Shodhaamrit, Vol.-2; Issue-2 (July-Dec.) 2025 : Page No.-270-273

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-2.0
Vol.-2; issue-2 (July-Dec.) 2025
Page No- 270-273

©2025 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

डॉ. आचार्य अविनाश चन्द्र शुक्ल
प्राचार्य,
श्री पंचायती संस्कृत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुण्डेरवा-बस्ती.

Corresponding Author :
डॉ. आचार्य अविनाश चन्द्र शुक्ल
प्राचार्य,
श्री पंचायती संस्कृत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुण्डेरवा-बस्ती.

महाकवि कालिदास कृत अभिज्ञानशाकुन्तल में काव्यसौन्दर्य का एक अनुशीलन

संस्कृत काव्य परम्परा में नाटक को सर्वाधिक रमणीय और श्रेष्ठ माना गया है। नाट्यशास्त्र के प्रणेता आचार्य भरतमुनि तथा अन्य आचार्यों ने इसकी महत्ता का सम्यक् प्रतिपादन किया है। महाकवि कालिदास का उत्कृष्टतम स्वरूप अभिज्ञानशाकुन्तल में मिलता है। महाभारत के कथानक को अपनी उत्तम कल्पना शक्ति से मौलिकता का समावेश करके महाकवि कालिदास ने इस नाटक को विश्व में सबसे उत्कृष्ट बना दिया है।

कालिदास सौन्दर्य के कवि हैं। उन्होंने अपनी तूलिका से अभिज्ञानशाकुन्तल की नायिका शकुन्तला के जिस सौन्दर्य का वर्णन किया है। वह केवल हृदयग्राही नहीं, अपितु मन को सर्वात्मना राजाप्लावित कर उसमें निमग्न कर देने वाला है।

अंग प्रत्यंगकानांयः सन्निवेषो यथो चित्तम्।
सुश्लिष्ट सन्धिबन्धो मस्त सौन्दर्यमितीर्यते ।।

नाट्य कला की दृष्टि से कालिदास का अभिज्ञानशाकुन्तल सरस्वती का सर्वोत्कृष्ट प्रसाद है-

कालिदासस्य सर्वस्वमभिज्ञान शाकुन्तलम् ।

कालिदास का सौन्दर्य इस सम्पूर्णता को संजोये हुए पूर्णतःभारतीय है। श्रम संस्कृति सौन्दर्य के पक्षपाती कालिदास के नायक दुष्यन्त ने इसका इतना अधिक समादर एवं सम्मान किया है कि राज प्रसाद की सारी विलास मुद्राओं से सम्भरित सौन्दर्य सिद्ध हो जाता है। यह प्रणयानुराग ऐसा दिव्य और अलौकिक है जहाँ श्रम एवं तप की महत्ता को ही महनीय बताते हुए कवि कहते हैं-

शुद्धान्त दुर्लभमिदं वपुराश्रमवासिनो यदि जनस्य ।
दूरीकृता खलुगुणैरुद्यानलता बनलताभिः ।।[1]
सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोलक्ष्मलक्ष्मी तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी।
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ।।[2]

अर्थात् चन्द्रमा मनोरम होता है। उसका कलंक भी दिव्य हो जाता है, कमल के साथ ग्रथित शैवाल मनोरम हो जाता है। इस माधुर्य का आविर्भाव तप और ताप से ही संभव है, दूसरा कोई स्त्रोत माधुर्य का है ही नहीं। जो तप नहीं करता उसे ताप से गुजरना पड़ता है। जो तपकर लेता है उसको अबन्ध्य रूपता प्राप्त हो जाती है और वह ऐसे सौभाग्य की अधिदेवता हो जाती है कि चन्द्रमा की अमृत कला को धारण करने वाले महायोगी उसके चरणों में प्रणिपात करने लगते हैं और चन्द्रमा की कलाचरणों के गीले महावर से रंग उठती है। कालिदास का सौन्दर्य बाह्य न होकर आन्तरिक है। वह आर्यमान् के आत्म विश्लेषण से उपजा हुआ निष्कर्ष है। मन का प्रमाणित करके निकाला हुआ नवनीत हैं।

संस्कृत नाट्य साहित्य में हमें सौन्दर्य के अनेक रूपों में दर्शन मिलते है। इसके अन्तर्गत नदियों की तरंगों, लताओं, पशुओं, पक्षियों, वृक्षों, पर्वतों आदि के लुभावने दृश्यों को देखकर ही कवियों को अपनी ओर आकर्षित करके कवि को लिखने हेतु मजबूर करते है। संस्कृत नाट्य सौन्दर्य में कवियों ने अपनी रचनाओं में मनोरम सौन्दर्य प्रस्तुत किये हैं। लेकिन कालिदास की दृष्टि में सौन्दर्य को बाह्य साधनों की आवश्यकता नहीं है। वास्तविक सौन्दर्य सभी अवस्थाओं में मनोरम एवं रमणीय होता है।

अहो सर्वास्ववस्थासु
रमणीयत्वमाकृक्तिविशेकषाणाम्

उसकी चारुता उसके अक्लिष्टकान्ति होने में ही निहित है। कालिदास का मत है कि समस्त दृश्य प्रकृति में जो सौन्दर्य या रमणीयता फैली हुई है, मानवीय लावण्य उसी का अंग भूत है इसी लिए वे स्त्री सौन्दर्य की तुलना प्रकृति की लताओं और पुष्पों से करते है-

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु संनद्धम् ।।[3]

नाट्य में सर्वत्र एक अत्यन्त उदात्त नैतिकता तथा आदर्श भारतीय मर्यादा का चित्रण हुआ है। कालिदास की उक्ति **विकार हेतौ सति विक्रियन्ते येषां न चेतांसि त एव धीराः (रघु 1/59)** और शेक्सपियर की उक्ति **OPPORTUNITY THE GUILT IS GREAT** की तुलना से ही स्पष्ट प्रतीत हो जाता है कि भारतीय आदर्श और पाश्चात्य आदर्श में कितना अन्तर है। संस्कृत नाट्य साहित्य में सौन्दर्य के अन्तर्गत कालिदास ने अपनी रुधिर रचनाओं में मानो संसार के लिए एक आदर्श प्रस्तृत किया हैं।

विश्व के सभी साहित्यों में सौन्दर्य प्रिय विषय रहा है इस प्रकार के वृत्तांतों से वैदिक वाङ्गय अछूता नहीं है. यह सौन्दर्य की दृष्टि से मनोरम है। सौन्दर्य चेतन-अचेतन, प्रकृति मानव समस्त चराचर में सर्वत्र सौन्दर्य के दर्शन होते रहते हैं। मनुष्य में सौन्दर्योपासना की प्रवृत्ति अनादि है। सौन्दर्य जिज्ञासा की इस प्रवृत्ति ने ही संस्कृति और सभ्यता को जन्म दिया। मानव संस्कृति और सभ्यता के विकास में कला का सर्वाधिक योगदान रहा है।

यदि तपोवन में रहने वाले लोगों का ऐसा, अन्तःपुर में भी दुष्प्राप्य ऐसा मनोहर शरीर है. तो मानों वन की लताओं ने अपने गुणों से उद्यान की लताओं को तिरस्कृत कर दिया है। यहाँ प्रकृति वर्णन के साथ आश्रम कन्याओं के सौन्दर्य वर्णन एवं तुलना में जो सौन्दर्य है, वह अप्रतिम है। तुलना में भी कला है। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि, नाटककार जयशंकर प्रसाद ने लिखा है कि काव्य की गणना विद्या में थी और कलाओं की गणना उपविद्या में। कला से जो अर्थ पाश्चात्य विचारों से लिया जाता है.वैसा भारतीय दृष्टिकोण में नहीं। फ्रेन्च समालोचक फागुये के अनुसार कला भाव की वह अभिव्यक्ति है, जो तीव्र गति से मानव हृदय को स्पर्श कर दें। तीव्रतम अभिव्यक्ति से भावविभोर होकर ही कला का सृजन होता है।

कालिदास के ग्रन्थों में प्रकृति चित्रण की कला में जो सौन्दर्य दिखाई देता है.वह अद्भुत है। सौन्दर्य ऐन्द्रिय संवेदना का विषय है और सौन्दर्य के दो आधार है-प्रकृति और कला। दण्डी ने कला को नृत्य, गीत आदि से युक्त कामोद्दीपन का सहायक माना है। उन्होनें लिखा है-नृत्य, गीत प्रभृतयःकला कामार्थ संश्रयाः

कल्पना की सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति को ही कला की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर के मतानुसार जो सत् है, जो सुन्दर है, वही कला है। जैसे कालिदास के निम्नलिखित श्लोक से

भी स्पष्ट हो जाता है-

यात्येकतोऽस्तशिखरंपतिरोषधीनामावि
ष्कृतोऽरुणपुरःसर एकतोऽर्कः।
तेजोद्वयस्य युगपद् व्यसनोदयाभ्यां
लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु ।।[4]

काव्य में सौन्दर्य बाह्य एवं आन्तरिक दोनों में होता है। बाह्य सौन्दर्य, स्थिर निष्प्राण और परिवर्तनशील होता है, परन्तु कालिदास के काव्य चित्रण निष्प्राण नहीं, वरन् जीवन्त होता है। प्रकृति भी रोती है, शकुन्तला के विदाई का दृश्य है।

उद्गलितदर्भकवला मृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूराः।
अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः ।।[5]

इस तरह कालिदास के श्लोकों में सूक्ष्म रूप से प्रकृति चित्रण, उपमा और मानवीकरण के स्वरूपों में कला और प्रकृतिगत सौन्दर्य के सभी तत्व विद्यमान है। कला और सौन्दर्य दोनों का सुन्दर सम्मिश्रण देखने को मिलता है।

काव्य और सौन्दर्य-काव्य और सौन्दर्य सौन्दर्यशास्त्र के अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रत्यय है। इन अवधारणाओं का आशय करना और उनका परस्पर सम्बन्ध दिखाना सौन्दर्यशास्त्र का मुख्य कार्य होता है।

कालिदास के कुमारसम्भव महाकाव्य के प्रारम्भ में ही प्रकृति की रमणीयता स्पष्ट होने लगती है, महर्षि मारीच की शुभाशंसा में यह पूर्णतया परिलक्षित भी होता है-

"दिष्ट्या शकुन्तला साध्वी सदपत्यमिदं भगवान्।
श्रद्धा वित्तं विधिश्चेति त्रितयं तत् स्वागतम्।।[6]

अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक में कला सांस्कृतिक सौन्दर्यबोध के प्रतीक परिगत शक्ति अर्थात् शिव-पार्वती को समर्पित इस वाक्य में ही कवि की समस्त सांस्कृतिकता और सौन्दर्यता समाहित होती है।

प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः
सरस्वती श्रुतिमहती महीयताम्।
ममापि च क्षपयतु नीललोहितः
पुनर्भवं परिगततशक्तिरात्मभूः।। [7]

वस्तुतःवह स्त्रीरत्न की अद्भुत सृष्टि है, उसके बाद भी वैसा फिर बनाया ही नहीं गया हो, वही प्रयत्नों की परिणति हो-

"चित्रे निवेश्य परिकल्पितसत्वयोगा
रुपोच्चयेन मनसा विधिना कृता नु।
स्त्रीरत्नसृष्टिरपरा प्रतिभाति सा में
धातुर्विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्च तपस्याः।।"[8]

कवि को मनीषी, परिभू, स्वयम्भू प्रजापति आदि उपाधियों से अभिमण्डित करने वाली भारतीय काव्य परम्परा में कालिदास ने अपने सार्वभौमिक, सार्वकालिक तथा वैविध्यपूर्ण स्वनासंसार से भारतीय संस्कृति तथा उसमें रची-बसी कलात्मक सुन्दरता को वैश्विक फलक पर संस्थापित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

कालिदासीय काव्य में साहित्य एवं काव्यशास्त्रीय तत्त्वों की अदभुत उपलब्धता के साथ ही उसमें भारतीय कला एवं सौन्दर्य के तत्त्व भी अतिशयता से प्राप्त होते हैं। इस सम्बन्ध में जर्मन कवि गेटे की उक्ति **"ऐश्वर्यं यदि वान्छसि प्रिय सखे: शाकुन्तलं सेव्यताम्"**[9] को विस्मृत नहीं किया जा सकता।

अभिज्ञान शाकुन्तल (शकुन्तला की ... अभिज्ञान शाकुन्तल में सौन्दर्य केवल शकुन्तला के शारीरिक आकर्षण(कोमल पत्तों सी त्वचा, कमलिनी सी आँखें, वल्कल वस्त्रों में भी अनुपम रूप) तक सीमित नहीं, बल्कि उसके स्वभाव की पवित्रता, प्राकृतिक परिवेश (कण्वाश्रम, मालिनी नदी), कालिदास की भाषा (मधुर, संगीतमय), श्रंगार रस(संयोग-वियोग) और आदर्श नारीत्व (विनम्रता, पतिव्रता) में भी है, जो इसे एक समग्र और कालातीत सौन्दर्य प्रदान करता है, यह सौन्दर्य शारीरिक आकर्षण से शुरु होकर जीवन मूल्यों और प्रेम की गहराई से जुड़कर महनीय बन जाता है।

अभिज्ञान शाकुन्तलम् में सौन्दर्य तत्व श्लोक शकुन्तला के अलौकिक रूप के वर्णन, प्रकृति के साथ उसके सामंजस्य, और मानवीय भावनाओं के चित्रण में हैं, जिनमें राजा दुष्यंत के मुख से कहे गए श्लोक जैसे **"कथमियं सा कण्वदुहिता"** (कहाँ है यह कण्व की पुत्री?) और **"न वा शरच्चन्द्र मरीचि कोमलं मृणालसूत्रं रचितं स्तनान्तरे"**[10] (उसके स्तनों का अन्त मृणाल तन्तु से नहीं, बल्कि शरत्कालीन चन्द्रमा की किरणों से बना है) प्रमुख हैं, जो उसके सौन्दर्य को

प्रकृति के सूक्ष्म तत्वों से जोड़कर दिखाते हैं, साथ ही भ्रमर का उसके मुख पर मंडराना भी एक प्रसिद्ध सौन्दर्य-चित्रण है।

वस्तुतःसाहित्य सौन्दर्य की अभिव्यक्ति है। चारुता, रमणीयता, चमत्कार एवं शोभा आदि पदों से सौन्दर्य अभिहित किया जाता है। महाकवि कालिदास की काव्य रचनाओं में लोकोत्तर ह्रासकारी सौन्दर्यतत्त्व के सर्वथा दर्शन होते हैं, विषयीगत एवं विषयगत दोनों ही रूपों में उन्होंने इसका प्रयोग किया है।

"कस्त्वं कन्ये कुतः आगता वा"दुष्यन्त का यह प्रश्न ही शकुन्तला के सौन्दर्य पर पहली प्रतिक्रिया है, जो उसे एक अपरिचित, वन-कन्या के रूप में दर्शाता है।

"न वा शरच्चन्द्र मरीचि कोमलं मृणालसूत्रं रचितं स्तनान्तरे" यह श्लोक सीधे शकुन्तला के कोमल स्तनों का वर्णन करता है, जिनकी तुलना शरदकालीन चन्द्र की किरणों से भी कोमल मृणाल तन्तुओं से की गई है, जो उसके नैसर्गिक सौन्दर्य को दिखाता है।

"तपोवनतरुणां"दुष्यन्त कहता है कि तपोवन के वृक्षों में लगे पुष्पों में भी इतना सौन्दर्य नहीं जितना शकुन्तला में है, और उसके वल्कल वस्त्र भी उसके सौन्दर्य को कम नहीं करते, बल्कि बढ़ा देते हैं(सुन्दर को जो पहनाओ, वही आभूषण है)।

"अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहैः
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः।।"[11]

अनाघ्रातं पुष्पं: ऐसा फूल जिसे सूंघा न गया हो (अछूता)।

किसलयम् अलूनं कररुहैःऐसी कोपल जिसे नाखूनों से तोड़ा न गया हो (अक्षत)।

रनाविद्धं रत्नम्:ऐसा रत्न जिसे छेदा या बिंधा न गया हो।

मधु नवम् अनास्वादितरसम्:ऐसा नया शहद जिसका रस चखा न गया हो।

अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपम् अनघम्: उसका वह निर्दोष रूप मानो पुण्यों का अखण्ड फल है।

न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः पता नहीं, विधाता (नियति) यहाँ किसे इसका भोक्ता (उपभोग करने वाला) बनायेगा।

यह श्लोक शकुन्तला के पवित्र और अनुपम सौन्दर्य को दर्शाता है, जिसे अभी तक किसी ने ठीक से अनुभव नहीं किया है, और उसके लिए एक योग्य साथी की प्रतीक्षा है, जिसका वर्णन प्रेम और प्रकृति के मिश्रण से किया गया है।

"अनाघ्रातं" (प्रथम अंक): दुष्यंत के मन में आता है कि वह ऐसा फूल है जिसे किसी ने सूंघा नहीं, ऐसा नया पत्ता जिस पर किसी के नाखून नहीं लगे, ऐसा रत्न जिसमें छेद नहीं हुआ, और ऐसा मधु जिसका स्वाद किसी ने नहीं चखा।

महाकालिदास ने सर्वत्र इस तथ्य का उद्घाटन किया है कि सौन्दर्य निरपेक्ष नहीं अपितु सापेक्ष तत्त्व है। इसी के साथ भारतीय चित्रकला के आदर्श स्वरूप का भी उद्घाटन किया है। मनोभावों की गहराई में अवतरित चित्रों को शब्दचित्र से काव्य फलक पर चित्रित करने में वे प्रवीण हैं। प्रायः उनके प्रत्येक काव्य में चित्रकला व सौन्दर्य के ऐसे अनूठे तत्त्व विस्तीर्ण हैं जिन पर आधुनिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन व चर्चा आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 1, श्लोक-17.
2. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 1, श्लोक-20.
3. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 1, श्लोक-21.
4. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 4, श्लोक-01.
5. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 4, श्लोक-11.
6. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 4, श्लोक-04.
7. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 7, श्लोक-16.
8. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 2, श्लोक-09.
9. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 3, श्लोक-14.
10. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 4, श्लोक-06.
11. अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक- 2, श्लोक-03.

•